

## वैदिक दर्शनों का विकास

भारतीय ऋषिओं ने जगत के रहस्य को छह कोणों से समझने की कोशिश की है। वे जानते थे कि मानव की सबसे बड़ी इच्छा दुख से छुटकारा है। वे इसके प्रति भी आश्वस्त थे कि इन सिद्धांतों के जरिये उन्होंने इसका निदान खोज लिया है। हिन्दू धर्म में दर्शन अत्यन्त प्राचीन परम्परा रही है। वैदिक दर्शनों में षड्दर्शन (छः दर्शन) अधिक प्रसिद्ध और प्राचीन हैं। ये छः दर्शन ये हैं- न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा और वेदान्त। गीता का कर्मवाद भी इनके समकालीन है। षड्दर्शनों को 'आस्तिक दर्शन' कहा जाता है। वे वेद की सत्ता को मानते हैं। हिन्दू दार्शनिक परम्परा में विभिन्न प्रकार के आस्तिक दर्शनों के अलावा अनीश्वरवादी और भौतिकवादी दार्शनिक परम्पराएँ भी विद्यमान रही हैं।

### **न्याय दर्शन**

महर्षि गौतम रचित इस दर्शन में पदार्थों के तत्त्वज्ञान से मोक्ष प्राप्ति का वर्णन है। पदार्थों के तत्त्वज्ञान से मिथ्या ज्ञान की निवृत्ति होती है। फिर अशुभ कर्मों में प्रवृत्त न होना, मोह से मुक्ति एवं दुखों से निवृत्ति होती है। इसमें परमात्मा को सृष्टिकर्ता, निराकार, सर्वव्यापक और जीवात्मा को शरीर से अलग एवं प्रकृति को अचेतन तथा सृष्टि का उपादान कारण माना गया है और स्पष्ट रूप से त्रैतवाद का प्रतिपादन किया गया है। इसके अलावा इसमें न्याय की परिभाषा के अनुसार न्याय करने की पद्धति तथा उसमें जय-पराजय के कारणों का स्पष्ट निर्देश दिया गया है।

तर्क प्रधान इस प्रत्यक्ष विज्ञान के शुरुआत करने वाले अक्षपाद गौतम हैं। यहाँ न्याय से मतलब उस प्रक्रिया से है जिससे मनुष्य किसी नतीजे पर पहुँच सके- नीयते अनेन इति न्यायः।

प्रत्येक ज्ञान के लिए चार चीजों का होना आवश्यक है-

- (1) प्रमाता अर्थात् ज्ञान प्राप्त करने वाला।
- (2) प्रमेय अर्थात् जिसका ज्ञान प्राप्त करना अभीष्ट है।
- (3) ज्ञान और
- (4) प्रमाण अर्थात् ज्ञान प्राप्त करने का साधन।

## वैशेषिक दर्शन

महर्षि कणाद रचित इस दर्शन में धर्म के सच्चे स्वरूप का वर्णन किया गया है। इसमें सांसारिक उन्नति तथा निश्च्रेय सिद्धि के साधन को धर्म माना गया है। अतः मानव के कल्याण हेतु धर्म का अनुष्ठान करना परमावश्यक होता है। इस दर्शन में द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय इन छः पदार्थों के साधर्म्य तथा वैधर्म्य के तत्वाधान से मोक्ष प्राप्ति मानी जाती है। साधर्म्य तथा वैधर्म्य ज्ञान की एक विशेष पद्धति है, जिसको जाने बिना भ्रान्तियों का निराकरण करना संभव नहीं है। इसके अनुसार चार पैर होने से गाय-भैंस एक नहीं हो सकते। उसी प्रकार जीव और ब्रह्म दोनों ही चेतन हैं। किंतु इस साधर्म्य से दोनों एक नहीं हो सकते। साथ ही यह दर्शन वेदों को, ईश्वरोक्त होने को परम प्रमाण मानता है।

महर्षि कणाद ने इस दार्शनिक मत द्वारा ऐसे धर्म की प्रतिष्ठा का ध्येय रखा है जो भौतिक जीवन को बेहतर बनाए और लोकोत्तर जीवन में मोक्ष का साधन हो।

### **'यतोम्युदय निश्रेयस सिद्धिः स धर्मः'**

न्याय दर्शन जहाँ अंतर्जगत और ज्ञान की मीमांसा को प्रधानता देता है, वहीं वैशेषिक दर्शन बाह्य जगत की विस्तृत समीक्षा करता है। इसमें आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए इसे अजर, अमर और अविकारी माना गया है। न्याय और वैशेषिक दोनों ही दर्शन परमाणु से संसार की शुरुआत मानते हैं। इनके अनुसार सृष्टि रचना में परमाणु उपादान कारण और ईश्वर निमित्त कारण है। इसके अनुसार जीवात्मा विभु और नित्य है तथा दुखों का खत्म होना ही मोक्ष है।

समस्त वस्तुओं को कुल सात पदार्थों के अंतर्गत माना गया है-

1. द्रव्य, 2. गुण, 3. कर्म, 4. सामान्य, 5. विशेष, 6. समवाय, 7. अभाव।

### **सांख्य दर्शन**

इस दर्शन के रचयिता महर्षि कपिल हैं। इसमें सत्कार्यवाद के आधार पर इस सृष्टि का उपादान कारण प्रकृति को माना गया है। इसका प्रमुख सिद्धांत है कि अभाव से भाव या असत से सत की उत्पत्ति कदापि संभव नहीं है। सत कारणों से ही सत कार्यों की उत्पत्ति हो सकती है। सांख्य दर्शन प्रकृति से सृष्टि रचना और संहार के क्रम को विशेष रूप से मानता है। साथ ही इसमें प्रकृति के परम सूक्ष्म कारण तथा उसके सहित २४ कार्य पदार्थों का स्पष्ट वर्णन किया गया है। पुरुष २५ वां तत्त्व माना गया है, जो प्रकृति का विकार नहीं है। इस प्रकार

प्रकृति समस्त कार्य पदार्थों का कारण तो है, परंतु प्रकृति का कारण कोई नहीं है, क्योंकि उसकी शाश्वत सत्ता है। पुरुष चेतन तत्त्व है, तो प्रकृति अचेतन। पुरुष प्रकृति का भोक्ता है, जबकि प्रकृति स्वयं भोक्ती नहीं है।

सच पूछा जाए तो यह एक द्वैतवादी दर्शन है। इसके अनुसार विश्व प्रपंच के प्रकृति और पुरुष दो मूल तत्त्व हैं। पुरुष चेतन तत्त्व है और प्रकृति जड़। इसके अनुसार जगत का उपादान तत्त्व प्रकृति है। सत्व, रज और तम आदि तीन गुण उसके अभिन्न अंग हैं। जब इन तीनों गुणों की साम्यावस्था भंग हो जाती है और उसके गुणों में क्षोभ उत्पन्न होता है तब सृष्टि का आरंभ होता है। प्रथमतः महत्तत्त्व, अहंकार और पंच तन्मात्राओं को मिलाकर सात तत्त्व उत्पन्न होते हैं। अहंकार का गुणों के साथ संयोग होने से ज्ञानेन्द्रियों, कर्मेन्द्रियों, मन तथा आकाश इन पाँच महाभूतों की उत्पत्ति होती है।

## योगदर्शन

इस दर्शन के रचयिता महर्षि पतंजलि हैं। इसमें ईश्वर, जीवात्मा और प्रकृति का स्पष्ट रूप से वर्णन किया गया है। इसके अलावा योग क्या है, जीव के बंधन का कारण क्या है? चित्त की वृत्तियाँ कौन सी हैं? इसके नियंत्रण के क्या उपाय हैं इत्यादि यौगिक क्रियाओं का विस्तृत वर्णन किया गया है। इस सिद्धांत के अनुसार परमात्मा का ध्यान आंतरिक होता है। जब तक हमारी इंद्रियाँ बहिर्गामी हैं, तब तक ध्यान कदापि संभव नहीं है। इसके अनुसार परमात्मा के मुख्य नाम ओ३म् का जाप न करके अन्य नामों से परमात्मा की स्तुति और उपासना अपूर्ण ही है।

महर्षि पतंजलि का 'योगसूत्र' योग दर्शन का प्रथम व्यवस्थित और वैज्ञानिक अध्ययन है। योगदर्शन इन चार विस्तृत भाग, जिन्हें इस ग्रंथ में पाद कहा गया है, में विभाजित है- समाधिपाद, साधनपाद, विभूतिपाद तथा कैवल्यपाद।

प्रथम पाद का मुख्य विषय चित्त की विभिन्न वृत्तियों के नियमन से समाधि के द्वारा आत्म साक्षात्कार करना है। द्वितीय पाद में पाँच बहिरंग साधन- यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार का विवेचन है। तृतीय पाद में अंतरंग तीन धारणा, ध्यान और समाधि का वर्णन है। इसमें योगाभ्यास के दौरान प्राप्त होने वाली विभिन्न सिद्धियों का भी उल्लेख हुआ है, किन्तु ऋषि के अनुसार वे समाधि के मार्ग की बाधाएँ ही हैं। चतुर्थ कैवल्यपाद मुक्ति की वह परमोच्च अवस्था है, जहाँ एक योग साधक अपने मूल स्रोत से एकाकार हो जाता है।

## मीमांसा दर्शन

वेद के मुख्य दो भाग हैं- कर्मकांड और वेदांत। संहिता और ब्राह्मण में कर्मकांड का प्रतिपादन किया गया है तथा उपनिषद् एवं आरण्यक में ज्ञान का। मीमांसा दर्शन के आद्याचार्य जैमिनि ने इस कर्मकाण्ड को सिद्धांतबद्ध किया है।

मीमांसासूत्र इस दर्शन का मूल ग्रन्थ है जिसके रचयिता महर्षि जैमिनि हैं। इस दर्शन में वैदिक यज्ञों में मंत्रों का विनियोग तथा यज्ञों की प्रक्रियाओं का वर्णन किया गया है। यदि योग दर्शन अंतःकरण शुद्धि का उपाय बताता है, तो मीमांसा दर्शन मानव के पारिवारिक जीवन से राष्ट्रीय जीवन तक के कर्तव्यों और अकर्तव्यों का वर्णन करता है, जिससे समस्त

राष्ट्र की उन्नति हो सके। जिस प्रकार संपूर्ण कर्मकांड मंत्रों के विनियोग पर आधारित हैं, उसी प्रकार मीमांसा दर्शन भी मंत्रों के विनियोग और उसके विधान का समर्थन करता है। धर्म के लिए महर्षि जैमिनि ने वेद को भी परम प्रमाण माना है। उनके अनुसार यज्ञों में मंत्रों के विनियोग, श्रुति, वाक्य, प्रकरण, स्थान एवं समाख्या को मौलिक आधार माना जाता है।

इस दार्शनिक मत के अनुसार प्रतिपादित कर्मों के द्वारा ही मनुष्य अभीष्ट प्राप्त कर सकता है। इसके अनुसार कर्म तीन प्रकार के हैं- काम्य, निषिद्ध और नित्य। वास्तव में बिना कर्म के ईश्वर भी फल देने में समर्थ नहीं है। मीमांसा दर्शन ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते हुए बहुदेववादी है। इसमें यज्ञादि कर्मों के परिणाम के लिए एक अदृश्य शक्ति की कल्पना की गई है, जो मनुष्य को शुभ और अशुभ फल देती है।

## वेदान्त दर्शन

वेदान्त का अर्थ है वेदों का अन्तिम सिद्धान्त। महर्षि व्यास द्वारा रचित ब्रह्मसूत्र इस दर्शन का मूल ग्रन्थ है। इस दर्शन को उत्तर मीमांसा भी कहते हैं। इस दर्शन के अनुसार ब्रह्म जगत का कर्ता-धर्ता व संहारकर्ता होने से जगत का निमित्त कारण है। उपादान अथवा अभिन्न कारण नहीं। ब्रह्म सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, आनंदमय, नित्य, अनादि, अनंतादि गुण विशिष्ट शाश्वत सत्ता है। साथ ही जन्म मरण आदि क्लेशों से रहित और निराकार भी है। इस दर्शन के प्रथम सूत्र 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा' से ही स्पष्ट होता है कि जिसे जानने की इच्छा है, वह ब्रह्म से भिन्न है, अन्यथा स्वयं को ही जानने की इच्छा

कैसे हो सकती है। और यह सर्वविदित है कि जीवात्मा हमेशा से ही अपने दुखों से मुक्ति का उपाय करती रही है। परंतु ब्रह्म का गुण इससे भिन्न है।

महर्षि वादरायण जो संभवतः वेदव्यास ही हैं, का 'ब्रह्मसूत्र' और उपनिषद् वेदांत दर्शन के मूल स्रोत हैं। आदि शंकराचार्य ने ब्रह्म सूत्र, उपनिषद् और श्रीमद्भगवद् गीता पर भाष्य लिख कर अद्वैत मत का जो प्रतिपादन किया उसका भारतीय दर्शन के विकास में इतना प्रभाव पड़ा है कि इन ग्रन्थों को ही 'प्रस्थान त्रयी' के नाम से जाना जाने लगा। वेदांत दर्शन निर्विकल्प, निरुपाधि और निर्विकार ब्रह्म को ही सत्य मानता है।

'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' इसके अनुसार जगत की उत्पत्ति ब्रह्म से ही होती है- 'जन्माद्यस्य यतः' (ब्रह्म सूत्र-2), उत्पन्न होने के पश्चात् जगत ब्रह्म में ही मौजूद रहता है और आखिरकार उसी में लीन हो जाता है। इसके अनुसार जगत की यथार्थ सत्ता नहीं है। सत्य रूप ब्रह्म के प्रतिबिम्ब के कारण ही जगत सत्य प्रतीत होता है।

जीवात्मा ब्रह्म से भिन्न नहीं है। अविधा से आच्छादित होने पर ही ब्रह्म जीवात्मा बनता है और अविधा का नाश होने पर वह उसमें तद्रूप होता है।

आगे चलकर वेदान्त के अनेकानेक सम्प्रदाय (अद्वैत, द्वैत, द्वैताद्वैत, विशिष्टाद्वैत आदि) बने।

षड् दर्शनों के अलावा लोकायत तथा शैव एवं शाक्त दर्शन भी हिन्दू दर्शन के अभिन्न अंग हैं।

0000